बारह-भावना

(कविवर पण्डितश्री दौलतरामजी कृत छहढाला की पाँचवीं ढाल से)

(दोहा)

मुनि सकलव्रती बड़भागी, भव भोगन तैं वैरागी।
वैराग्य उपावन माई, चिन्तैं अनुप्रेक्षा भाई॥
इन चिन्तत सम सुख जागैं, जिमि ज्वलन पवन के लागैं।
जब ही जिय आतम जानैं, तब ही जिय शिव सुख ठानैं॥

(अनित्यभावना)

जोवन[१] गृह गो[२] धन नारी, हय गय[३] जन आज्ञाकारी।
इन्द्रिय भोग छिन थाई, सुरधनु[४] चपला चपलाई॥

(अशरणभावना)

सुर असुर खगाधिप जेते, मृग ज्यों हरि काल दले ते।
मणि मन्त्र तन्त्र बहु होई, मरतैं न बचावैं कोई॥

(संसारभावना)

चहुँ गति दुःख जीव भरे हैं, परिवर्तन पञ्च करै हैं।
सब विधि संसार-असारा, यामैं सुख नाहिं लगारा॥

(एकत्वभावना)

शुभ-अशुभ करम फल जेते, भोगे जिय एकहि तेते।
सुत[५] दारा[६] होय न सीरी[७], सब स्वारथ के हैं भीरी[८]॥

---

१. यौवन; २. गाय; ३. हाथी-घोड़ा; ४. इन्द्रधनुष; ५. पुत्र; ६. स्त्री; ७. साथी; ८. सगे

(अन्यत्वभावना)

जल पय ज्यौं जिय तन मेला, पै भिन्न-भिन्न नहिं भेला।
तो प्रकट जुदे धन धामा, क्यों ह्वै इक मिलि सुतरामा॥

(अशुचिभावना)

पल रुधिर राध[1] मल थैली, कीकस[2] वसादि[3] तैं मैली।
नव द्वार बहैं घिनकारी, अस देह करैं किम यारी॥

(आस्रवभावना)

जो योगन की चपलाई, तातैं ह्वै आस्रव भाई।
आस्रव दुःखकार घनेरे, बुधिवन्त तिन्हें निरवेरे॥

(संवरभावना)

जिन पुण्य-पाप नहिं कीना, आतम अनुभव चित दीना।
तिनही विधि आवत रोके, संवर लहि सुख अवलोके॥

(निर्जराभावना)

निज काल पाय विधि झरना, तासों निज काज न सरना।
तप करि जो कर्म खिपावै, सोई शिवसुख दरसावै॥

(लोकभावना)

किन हू न कर्‌यो न धरैं को, षट् द्रव्यमयी न हरै को।
सो लोक माहिं बिन समता, दुःख सहै जीव नित भ्रमता॥

(बोधिदुर्लभभावना)

अन्तिम ग्रीवक लौं की हद, पायो अनन्त विरियाँ पद।
पर सम्यग्ज्ञान न लाधौ, दुर्लभ निज में मुनि साधौ॥

(धर्मभावना)

जो भाव मोह तै न्यारे, दृग ज्ञान व्रतादिक सारे।
सो धर्म जबै जिय धारै तब ही सुख अचल निहारै॥

---

१. पीव; २. हड्डी; ३. चर्बी